अध्याय VII

भावी सम्भावनाएं

7.1 भारतीय वित्तीय परिदृश्य वित्तीय उदारीकरण के दस वर्षों के दौरान काफी कुछ बदल गया है। बैंकिंग क्षेत्र के सुधार जो ठीक एक दशक पहले 1992-93 में शुरू किये गये थे, पांच बुनियादी मुद्दों पर आधारित हैं: विवेक-सम्मत मानदण्डों और बाजार अनुशासन को सुदृढ़ करना; अंतर्राष्ट्रीय आधार-बिन्दुओं को यथोचित रूप में अपनाना; संगठनात्मक परिवर्तन और समेकन का प्रबंधन; प्रौद्योगिकी की दृष्टि से उन्नयन तथा मानव संसाधन विकास। सम्पूर्ण वित्तीय क्षेत्र के सुधार का आधार-सूत्र ''क्रमिक रूप से परिवर्तन'' रहा है, जिसमें उपयुक्त समय, गति और क्रम को पर्याप्त महत्त्व दिया गया है, तथा इसमें प्रत्येक स्तर पर पणधारियों के साथ व्यापक विचार-विमर्श और परामर्श किया गया है।

7.2 इसे व्यापक रूप से मान लिया गया है कि इन सुधारों के परिणामस्वरूप, भारतीय बैंकिंग प्रणाली कारोबारी प्रक्रिया के रूपान्तरण और जोखिम प्रबन्धन में उसकी क्षमता की दृष्टि से अधिकाधिक परिपक्व होती जा रही है। अपविनियमन, प्रौद्योगिकीय उन्नयन, अधिकाधिक बाजार समेकन तथा बाह्य वित्तीय उदारीकरण वित्तीय क्षेत्र में इस रूपान्तरण के पीछे मुख्य कारक रहे हैं ।

7.3 वित्तीय क्षेत्र में सुधारों की इस आम रणनीति के अनुरूप, बैंकिंग क्षेत्र ने वर्ष 2002-03 के दौरान अनेक उल्लेखनीय गतिविधियां देखी हैं। इनमें से मुख्य-मुख्य हैं-वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण तथा प्रतिभूति हित प्रवर्तन (एसएआरएफएईएसआइ) अधिनियम 2000 का पारित होना, जोखिम आधारित पर्यवेक्षण का प्रारम्भ किया जाना तथा त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई (पीसीए) ढांचे का परिचालनीकरण । इसके अलावा, बुनियादी संरचना के वित्तपोषण हेतु संशोधित दिशानिर्देश, ऋणदाताओं के दायित्व संबंधी कानून पर दिशानिर्देश, ऋण के प्रबंधन तथा बाजार जोखिमों पर मार्गदर्शी नोट, देशी जोखिम प्रबंध में मार्गदर्शी दिशा-निर्देश, तथा संशोधित कम्पनी ऋण पुनर्निर्माण प्रक्रिया-तंत्र, इन सभी को एक साथ लागू किया गया है ताकि एक अधिक ऊर्जस्वित, गतिशील और स्वस्थ बैंकिंग क्षेत्र प्रदान किया जा सके।

7.4 इस पृष्ठभूमि में, इस अध्याय में हाल ही में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा उठायी गयी पहलों के संदर्भ में मध्यावधि में, भारतीय वित्तीय क्षेत्र के समक्ष अवसरों और चुनौतियों को रेखांकित किया गया है। इन नीतिगत परिवर्तनों को मोटे तौर पर तीन शीर्षों में वर्गीकृत किया जा सकता है (क) विवेक-सम्मत मानदण्डों को सुदृढ़ करना, (ख) प्रणाली में संरचनागत परिवर्तन करना और (ग) रिज़र्व बैंक की विनियामक भूमिका को पुनः परिभाषित करना।

विवेकसम्मत मानदण्डों को सुदृढ़ करना

7.5 लाइसेंस देने की प्रक्रिया, बैंकों के विनियमन और विवेक-सम्मत पर्यवेक्षण की गतिविधियों का मुख्य बल विभिन्न विवेकसम्मत मानदण्डों और संकेतकों की स्थापना करके तथा उनकी निगरानी द्वारा एक स्थिर और अर्थक्षम बैंकिंग प्रणाली बनाने पर रहा है। बैंकों के विवेक-सम्मत पर्यवेक्षण का उद्देश्य व्यवस्थागत जोखिमों को रोकने और साथ ही साथ प्रत्येक बैंक को प्रतिस्पर्धी वातावरण में अपनी गतिविधियों को संगठित करने और उन्हें चलाने की स्वायतत्ता देने पर रहा है। इसमें दृष्किोण यह रहा है कि भारतीय मानदण्डों को अंतर्राष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों का आधार देकर उन्हें क्रमिक रूप से एक निश्चित समय सीमा में अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप बना दिया जाये।

बेसिल समझौता

7.6 अंतर्राष्ट्रीय रूप से, पूंजी-पर्याप्तता के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय मानकों की ओर बढ़ने के प्रयास में विश्वसनीयता बढ़ी है, क्योंकि नया पूंजी समझौता, जिसे कि बेसिल-II के रूप में जाना जाता है, 2006 में लागू कर दिया जायेगा। रिज़र्व बैंक एक ऐसा व्यवहार्य दृष्टिकोण संवर्धित करने के लिए उन प्रस्तावों पर अंतर्राष्ट्रीय चर्चाओं में सक्रिय रूप से भाग लेता रहा है तथा अन्य गैर जी-10 पर्यवेक्षकों के साथ पहल करने में अगुवा रहा है, जो भारी लागतों को झेले बिना कम जटिल बैंकों द्वारा अपनाये जा सकते हैं । इसने अपनी टिप्पणियां अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक के तीसरे पर्यवेक्षी दस्तावेज जो कि हाल ही में जुलाई 2003 में जारी किया गया है, में संप्रेषित की हैं।

7.7 इस प्रस्तावित ढांचे के संबंध में एक बुनियादी चिन्ता मानकीकृत बनाम आंतरिक रेटिंग आधारित दृष्टिकोण के गुण-दोष के संबंध में रही है। विश्व में अधिकांश बैंकों से मानकीकृत दृष्टिकोण को अपनाने की अपेक्षा की गयी है। इस तथ्य को मानते हुए कि यह बाहरी एजेंसियों द्वारा की गयी रेटिंग पर आधारित है। वहीं उभरती बाजार अर्थव्यवस्था में इस प्रकार की रेटिंग की सीमित व्याप्ति की एक सीमा है। इसीसे जुड़ा एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा लागतों से संबंधित है, जो कि यह रेटिंग की प्रक्रिया प्रणाली पर थोपेगी। उपर्युक्त सीमाओं

को देखते हुए यह सोचा गया है कि इस प्रकार का दृष्टिकोण विकासशील अर्थव्यवस्था में जोखिम के प्रति संवेदनशीलता को काफी सीमा तक नहीं बढ़ायेगा। दूसरी ओर, आंतरिक रेटिंग आधारित दृष्टिकोण एक अधिक जोखिम संवेदी है और ऐसी आशा की जाती है कि यह एक बेहतर जोखिम-प्रबंध की परम्पराएं विकसित करेगा। तथापि, केवल वे ही बैंक जिनके पास पर्याप्त आंकड़े, उन्नत प्रबंध सूचना प्रणाली और तकनीकी दक्षता की उच्च क्षमता विद्यमान है, एक निश्चित समय सीमा में इस दृष्टिकोण को अपनाने की स्थिति में होंगे। ऐसे बैंकों के लिए जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कम सक्रिय हैं, मानकीकृत दृष्टिकोण आंतरिक रेटिंग आधारित दृष्टिकोण की तुलना में बेहतर लगता है, तथापि, अंतिम विश्लेषण के बारे में देश और बैंक विशेष, इन दोनों के संदर्भ में, विचार करते हुए इन दोनों दृष्टिकोणों में से किसी एक दृष्टिकोण को अपनाने का निर्णय लिया जा सकेगा।

7.8 रिज़र्व बैंक ने बेसिल-II के दूसरे आधार के दो प्रमुख घटकों,अर्थात जोखिम आधारित पर्यवेक्षण और त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई को लागू करने के लिए पहले ही कदम उठाये हैं। त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई का ढांचा प्रायोगिक आधार पर रिज़र्व बैंक द्वारा पहले ही लागू कर दिया गया है। इसके अलावा, जोखिम आधारित पर्यवेक्षण का अग्रणी प्रयोग अक्तूबर 2003 से परिचालन में आ गया है।

ऋण के वर्गीकरण संबंधी मानदण्ड

7.9 भारतीय संदर्भ में, 31 मार्च 2001 से 'गत देय' की धारणा (30 दिन की रियायती अवधि) की समाप्ति के साथ क्षतिग्रस्त ऋणों के लिए विवेकसम्मत मानदण्डों के विनियामक पर्यवेक्षण को कठोर बना दिया गया है। अंतर्राष्ट्रीय संव्यवहारों के और नजदीक पहुंचने की दृष्टि से यह निर्णय लिया गया कि 31 मार्च 2004 को समाप्त होनेवाले वर्ष से क्षतिग्रस्त ऋणों के लिए 90 दिन के मानदण्ड को अपनाया जाये। इसके अलावा आस्तियों को 'संदिग्ध' आस्तियों के रूप में वर्गीकरण करने की अवधि भी 31 मार्च 2005 से 18 महीनों से घटाकर 12 महीने करने का निर्णय लिया गया है। ऋण वर्गीकरण के मानदंडों में लायी गयी क्रमिक कठोरता के साथ-साथ बेहतर जोखिम प्रबंध संव्यवहार तथा बेहतर वसूली के प्रयास किये जा रहे हैं जिन्हें विधायी परिवर्तन से भी समर्थन दिया जा रहा है।

7.10 यह मानने की आवश्यकता है कि ऋणों के वर्गीकरण के संबंध में अलग-अलग देशों में विद्यमान विवेकसम्मत मानदण्डों में काफी भिन्नताएं हैं। जहां कुछ देश व्यक्तिपरक दृष्टिकोण अपनाते है, जबकि कुछ अन्य देश निर्धारणात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में पर्यवेक्षकों से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वे ऋणों के वर्गीकरण के लिए कोई विशिष्ट स्वरूप अपनायें और न ही ऋणों के वर्गीकरण की श्रेणियों की संख्या पर वहां कोई सिफारिश की जाती है, जिन्हें बैंकों द्वारा अपनाया जाये। कुछ अन्य देश जैसे अमरीका एक अधिक निदेशात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं जिसमें ऋणों के भुगतान के अनुभव से लेकर उस पर्यवेक्षी के आधार पर जिसमें कि ऋणी रहता है, विभिन्न प्रकार के मानदण्डों को अपनाकर ऋणों का अनेक श्रेणियों में वर्गीकरण किया जाता है। इस प्रकार की प्रणाली को अपनाने के लिए एक ऐसा दृष्टिकोण उपयोगी होगा जो पर्यवेक्षी की विश्लेषण क्षमता और बैंकों के ऋण संविभागों की तुलना करने में सुविधा प्रदान करे।

7.11 ऋण वर्गीकरण का मानदंड आम तौर पर ऋण की गुणवत्ता पर वस्तुनिष्ठ और व्यक्तिनिष्ठ दोनों प्रकार के संकेतकों पर निर्भर करता है। हालांकि, इन दोनों के बीच संतुलन बनाना अकसर कठिन होता है । वस्तुपरक मानदण्ड में ऋण कितने दिनों तक 'गत देय' रहा और इससे भी व्यापक तौर पर ऋणी की वर्तमान स्थिति क्या है ? इन बातों को शामिल करता है। दूसरी ओर, व्यक्तिनिष्ठ मानदंड में कार्यकारी पूंजी की पर्याप्तता में कमी, वित्तीय सूचना का अभाव और इस तरह की अन्य बातें शामिल हैं । जहां 'गत देय' वाले ऋणों के दिनों की संख्या ऋण को वर्गीकृत करने के प्रयोजन के लिए न्यूनतम स्थिति को दर्शाती है, वहीं अन्य मानदंड भावी संकेतकों को दर्शाते हैं (चूक की प्रत्याशित सम्भावना का सही-सही आकलन)ऋणों के उपयुक्त वर्गीकरण तथा बैंकों की निवल मालियत में हो सकनेवाले क्षरण को रोकने में काफी उपयोगी संकेत दे सकते हैं। जैसे कि रिज़र्व बैंक द्वारा हाल ही में बैंकों द्वारा स्वैच्छिक रूप से अपनाये जाने वाले ''विशेष उल्लेखनीय खाते" का निर्धारण इस दिशा में किया गया एक संकेत है।

प्रावधानीकरण

7.12 अब यह मान लिया गया है कि आम तौर पर वित्तीय अस्थिरता की जड़ें व्यापक आर्थिक कारकों में निहित होती हैं। संकट की स्थिति विशिष्ट रूप से इसलिए आती है क्योंकि बैंकों को संयुक्त रूप से एक मिले-जुले व्यापक आर्थिक आघात का सामना करना पड़ता है। अकसर यह कारोबार और वित्तीय चक्र से संबंधित होता है। इस चुनौती की प्रतिक्रिया में, पर्यवेक्षक एक ऐसी तकनीक ढूंढ़ने में लगे हैं जिससे कि बैंकिंग प्रणाली वित्तीय चक्र के उतार-चढ़ाव के प्रति जीवन्तशक्ति प्राप्त कर सके। विशेष रूप से, बैंकों को अच्छी स्थिति के समय में पूंजी आधार (कुशन) निर्मित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि ऐसी पूंजी उन्हें इस चक्र की उतरती स्थिति में उनकी ऋण देने की स्थिति को सुरक्षा प्रदान कर सके।

7.13 प्रावधानीकरण की एक केन्द्रीय विशेषता विशेष रूप से पहले ही हुई हानियों या ऐसी होनेवाली हानियों के संदर्भ में है, जिसके होने का काफी विश्वास हो । तथापि, ऐसे मामलों में भी जहां सामान्य ऋण हानि के लिए सुस्पष्ट संदर्भ विद्यमान न हों, बैंकर ऐसी प्रथाएं अपनाने के लिए राजकोषीय और लेखाकरण प्रोत्साहनों के आधार पर भविष्योन्मुखी दृष्टिकोण अपना सकते हैं। हाल ही में केंद्रीय बजट में ऐसे कई प्रोत्साहन दिये गये हैं। केंद्रीय बजट 2002-03 में प्रावधानीकरण के लिए बेहतर कर-प्रोत्साहन घोषित किये गये हैं। बाद में, केंद्रीय बजट 2003-04 में एक ऐसी योजना प्रस्तावित की गयी है जिसमें उच्च कूपन वाली बहुत ही कम मात्रा में खरीदी बेची जानेवाली सरकारी प्रतिभूतियों की स्वैच्छिक रूप से पुनर्खरीद से प्राप्त होनेवाली आय यदि इसे गैर-निष्पादक आस्तियों के लिए प्रावधानीकरण हेतु उपयोग में लाया जाता हो, तो कर से मुक्त होगी।

गैर-निष्पादक आस्तियां

7.14 बैंकिंग स्वास्थ्य के सामने मुख्य चुनौती बैंक के तुलनपत्रों में गैर-निष्पादक आस्तियों की उल्लेखनीय राशि बनी रहने से उभरती है। गैर-निष्पादक आस्तियों के उन्नयन, वसूलियां करने और बट्टे खाते में डालने जैसे कई मिले-जुले उपायों से सकल गैर-निष्पादक आस्तियां मार्च 1997 के अंत के 15.7 प्रतिशत से निरंतर रूप से कम होकर मार्च 2003 के अंत में 8.8 प्रतिशत रह गयीं।

7.15 भारत में गैर-निष्पादक आस्तियों के उच्च स्तर पर बने रहने का प्रमुख कारक है अतिदेय ऋणों की वसूली के लिए अपर्याप्त कानूनी ढांचा का होना। हालांकि, व्यवहार में, ऋण अधिकांशतः संपार्श्विकृत होते हैं, फिर भी, इन जमानती प्रतिभूतियों का मूल्य ऋणों के समकक्ष नहीं होता। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इन जमानतों को समय पर भुनाना भी अक्सर मुश्किल होता है। बैंकों की सकल और निवल गैर-निष्पादक आस्तियों के बीच भारी अंतर, जो कि विशेष रूप से सकल गैर-निष्पादक आस्तियों के करीब आधे तक है, जो गैर-निष्पादक आस्तियों के लिए अनिवार्य प्रावधानीकरण और सरकारी क्षेत्र के बैंकों द्वारा सीमित मात्रा में ऋण बट्टे खाते डाले जाने को दर्शाता है। इसके परिणामस्वरूप, गैर-निष्पादक आस्तियों को बहियों में आगे ले जाया जाता है और उनके लिए किये जानेवाले प्रावधान क्रमिक रूप से काफी बढ़ जाते हैं। इस संदर्भ में केंद्रीय बजट 2002-03 में की गयी घोषणा के अनुरूप आस्ति पुनर्निर्माण कंपनियां (एआरसी) स्थापित की गयीं हैं जिनमें सरकारी और निजी क्षेत्र के बैंकों, वित्तीय संस्थाओं, और बहुपक्षीय एजेंसियों का सहभाग था। इस प्रकार की कार्रवाई से बैंकों को अपनी गैर-निष्पादक आस्तियों से निपटने के लिए अतिरिक्त मार्ग ही नहीं, अपितु गैर-निष्पादक आस्तियों को अपने तुलनपत्र से हटाने और न्यूनतर प्रावधानीकरण की आवश्यकताओं के द्वारा लाभप्रदता बढ़ाने के भी अवसर मिलने की आशा है। साथ ही आशा है कि आस्ति पुनर्निर्माण कंपनियां और अधिक अशोध्य ऋणों की वसूली (संभवतः और तेज गति से) कर सकेंगी, क्योंकि वे ऋण वसूली के लिए कृत संकल्प होंगी।

7.16 2002 में वित्तीय आस्तियों के प्रतिभूतिकरण और पुनर्निर्माण तथा प्रतिभूति हित प्रवर्तन अधिनियम पारित हो जाने के कारण गैर-निष्पादक आस्तियों की वसूली की संभावनाएं बढ़ गयी हैं। अतः अधिनियम में प्रतिभूतियों पर कब्जा करने के लिए सुविधा प्रदान करने की दृष्टि से अपेक्षाकृत सख्त विधान की परिकल्पना की गयी है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों ने आस्ति पुनर्निर्माण कंपनियों को बेचने के लिए 12,000 करोड़ रुपये की गैर-निष्पादक आस्तियां निश्चित की हैं, तथापि बिक्री पूर्व ऋणों के मूल्यन की प्रक्रिया पूरी की जानी अभी बाकी है।

7.17 रिज़र्व बैंक ने हाल ही में गैर-निष्पादक आस्तियों की स्थिति में और वृद्धि को रोकने की दृष्टि से मार्गदर्शी सिद्धान्त जारी किये हैं। इस प्रक्रिया के अंतर्गत बैंकों को आंतरिक निगरानी और अनुपालन के लिए मानक और अवमानक श्रेणी के खातों के बीच विशेष उल्लेखनीय खाते की एक नयी आस्ति श्रेणी बनाने के लिए सूचित किया गया है। इससे बैंक संभावित समस्यावाले खातों पर समस्या की प्रारंभिक अवधि से ही और अधिक ध्यान दे पायेंगे ताकि निगरानी और निवारक कार्रवाई सक्षम रूप से की जा सके।

जोखिम-प्रबंधन

7.18 आस्ति-देयता प्रबंधन सहित बैंकों में जोखिम-प्रबंध संबंधी संव्यवहारों को सुदृढ़ बनाने के लिए हाल ही में रिज़र्व बैंक ने अनेक कदम उठाये हैं। अभी हाल ही में रिज़र्व बैंक ने देश विशेष संबंधी जोखिम-प्रबंध विषयक मार्गदर्शी सिद्धांत जारी किए हैं। ऋण और बाज़ार जोखिमों संबंधी मार्गदर्शी टिप्पणियां भी 2002 में जारी की गयी थीं। बैंकों को सूचित किया गया है कि वे अपने कारोबार के आकार और उसकी जटिलता, जोखिम-दर्शन, बाज़ार-बोध और पूँजी के प्रत्याशित स्तर के आधार पर अपनी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अपनी जोखिम प्रबंध संबंधी प्रणालियों को समुन्नत बनाने के लिए इन मार्गदर्शी टिप्पणियों का उपयोग करें।

ब्याज दर जोखिम

7.19 जोखिम का महत्त्वपूर्ण पक्ष, विशेष रूप से सरकारी प्रतिभूति बाजार में, ब्याज दर जोखिम से संबंधित है। यह विशेषकर, भारतीय संदर्भों में, जहां बैंक सांविधिक अपेक्षाओं से काफी अधिक श्रेष्ठ प्रतिभूति

रखते हैं, पर लागू है। विशेष रूप से, बैंकों को पुनः लागत निर्धारण जोखिम जो समय के अंतराल से बैंकों की आस्तियों और देयताओं की परिपक्वता और पुनर्मूल्यन में निर्मित होता है तथा आय वक्र जो आय वक्र के ढलान तथा आकार में होनेवाले बदलाव से निर्मित होता है, का सामना करना पड़ता है। यही बात ब्याज संवेदी आस्तियों और देयताओं की परिपक्वता संरचना के संबंध में निगरानी और सूचना देने (प्राप्त करने) की आवश्यकताओं में वृद्धि करने और ब्याज दर परिवर्तन की तुलना में तुलनपत्र संवेदनशीलता का विश्लेषण करने के महत्त्व को रेखांकित करती है। बेसिल समिति ने ब्याज दर जोखिम प्रबंधन प्रक्रिया के लिए कई मार्गदर्शक सिद्धांत प्रस्तुत किये हैं; इसमें कारोबार नीति तथा आंतरिक नियंत्रण प्रणाली विकसित करना भी शामिल है।

7.20 भारत में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की लाभप्रदता के स्रोतों का विश्लेषण यह दर्शाता है कि हाल की उनकी लाभप्रदता में आयी वृद्धि का अधिकांश भाग व्यापारिक आय से है जो ब्याज की निरंतर ह्रासमान रही दरों को दर्शाती है। इसप्रकार बैंकों के तुलनपत्र ब्याज दर परिवेश से जुड़ने लगे हैं। बैंक स्टॉकों का मूल्यन व्यापारिक लाभ की आशा के आधार पर होने की सीमा तक, ऋण और इक्विटी बाजार के बीच एक नया संपर्क उभर रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में, रिज़र्व बैंक इस बात पर बल देता रहा है कि श्रेष्ठ प्रतिभूतियों के व्यापार से मिलने वाली उच्च आय से बैंकों को आत्मसंतुष्ट होकर शांत नहीं बैठ जाना चाहिए। ब्याज दर जोखिम की संभावना का पता लगाने और तदनुसार उचित जोखिम प्रबंध प्रणाली स्थापित करने तथा सर्वोत्तम अंतर्राष्ट्रीय प्रथाओं के अनुरूप प्रावधानीकरण तथा प्रारक्षित निधियाँ अधिक मात्रा में निर्माण करने की जरूरत है। ऐसी आकस्मिकताओं से बैंकों को बचाने के लिए रिज़र्व बैंक ने उन्हें सूचित किया है कि वे प्रतिकूल ब्याज दर घट-बढ़ के लिए अपने विपणन किये गये प्रतिभूति संविभाग के अनुपात के रूप में मार्च 2002 के अंत से निवेश घट-बढ़ निधि की स्थापना करें। अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के लिए निवेश घटबढ़ निधि की राशि मार्च 2003 के अंत में "बिक्री के लिए उपलब्ध" और "विपणन के लिए धारित" इन दोनों श्रेणियों को मिलाकर उनके निवेश के 1.8 प्रतिशत होगी। बैंकों को सूचित किया गया है कि मार्च 2006 के अंत तक वे अपने व्यापार योग्य वाणिज्यिक पत्रों के न्यूनतम 5 प्रतिशत के बराबर के निवेश घटबढ़ प्राप्त करें।

प्रणाली में प्रभावी संरचनात्मक परिवर्तन करना

7.21 नीति-संचालित संरचनात्मक परिवर्तन दीर्घावधि में वित्तीय प्रणाली की अर्थ-क्षमता और वहनीयता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, भारत में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की प्रक्रिया में संरचनात्मक स्वरूप के कई विशिष्ट मामलों पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

7.22 भारत के संदर्भ में मुख्य संरचनात्मक दुरुहता ऋण की लागत से संबंधित है। ऋण की लागत धीरे-धीरे निवेश संबंधी निर्णयों में मुख्य निर्धारक बन रही है। रिज़र्व बैंक ने हाल के वर्षों में ह्रासमान ब्याज दर नीति के दृष्टिकोण का अनुपालन किया है - बैंक दर अब 6.0 प्रतिशत है जो 30 वर्षों में सबसे कम है। जहां मौद्रिक नीतिगत उपायों की प्रतिक्रिया के रूप में मुद्रा बाजार में ब्याज दरों में और सरकारी प्रतिभूति बाजारों में आय में कमी आती रही है, वहीं ऋण बाजारों में इसका असर अब भी बहुत अधिक नहीं है।

7.23 रिज़र्व बैंक ने बार-बार उधार की दरों में सहजता से गिरावट लाने में बाधक हो रही संरचनात्मक दुरूहताओं को दूर करने की आवश्यकता पर बल दिया है। ब्याज दरों में नमनीयता में बाधक हो रहे जिन दो मूलभूत घटकों की पहचान की गयी है, वे हैं - उच्च निधि आवश्यकताएं और अल्प बचतों पर अवरुद्ध ब्याज दरें अब लागू नहीं हैं। अन्यों में से, गैर-निष्पादक आस्तियों में और कमी की जा सकती है, किंतु परिचालनात्मक व्यय अवरुद्ध हो गये लगते हैं जो उत्पादकता बढ़ाने के लिए पहल की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं।

7.24 विगत की गैर-निष्पादक आस्तियों के भार के अलावा दुरूहताएं, कमोबेश रूप में, कम उत्पादकता से निर्मित होती हैं। अधिक प्रभावी, उत्पादक और प्रतिस्पर्धात्मक व्यवस्था को अपनाने के लिए बैंकिंग प्रणाली को कंपनी संचालन, आर्थिक मूल्य वर्धन और प्रौद्योगिक उन्नयन जैसे कई क्षेत्रों में रूपांतरण की चुनौतियों का सामना करना होगा।

7.25 सुलभ चलनिधि स्थितियों के होते हुए बैंकों द्वारा सरकारी बांड में भारी मात्रा में किये गये निवेशों के कुछ लाभ मिल रहे हैं। सरकारी प्रतिभूति बाजारों में धारणीय सुदृढ़ता से मिले भारी विपणन लाभों से बैंक की लाभप्रदता बढ़ाने और गैर-निष्पादक आस्तियों के बारे में प्रावधानीकरण करने के लिए संसाधन मिले हैं। अंततः खराब औद्योगिक वृद्धि के समय अत्यधिक उधार देने से प्रतिकूल चयन की समस्या पैदा हो सकती है, जिससे बचा जा सकता था। साथ ही इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि बैंकिंग का प्राथमिक व्यवसाय है - ऋण का निर्माण करना। जहां सुलभ चलनिधि के समय इस तरह की संकीर्ण बैंकिंग उचित होगी, वहीं दीर्घावधि में बैंकिंग प्रणाली का व्यापक आर्थिक कार्य-निष्पादन उनकी औद्योगिक और अन्य उद्यमों की निधियन की क्षमता पर निर्भर होगा।

बैंकिंग में प्रौद्योगिकी

7.26 बैंकिंग में प्रौद्योगिकी से संबंधित मामले उत्पादकता, दक्षता और ग्राहक संतुष्टि से उनकी सम्बद्धता की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण

हैं । प्रौद्योगिकी ने जोखिम प्रबंध, बैंक शाखाओं में विवरणियों का मिलान तथा ग्राहकों को मूल्यवर्धित सेवा प्रदान करने जैसे बैंक के कई मुख्य कार्यक्षेत्रों में बहुविध परिवर्तन किये हैं।

7.27 एक सुरक्षित, संरक्षित, सुदृढ़ और दक्ष समन्वित भुगतान एवं निपटान प्रणाली की स्थापना करने के उद्देश्य सहित बैंकिंग क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के उन्नयन में रिज़र्व बैंक एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता रहा है। इस प्रयास में 'इंफिनेट' के माध्यम से वित्तीय संस्थाओं को एकीकृत करने का लक्ष्य, इलेक्ट्रॉनिक निधि अंतरण (ईएफटी) प्रणाली के कार्यान्वयन सहित भुगतान की खुदरा इलेक्ट्रॉनिक पद्धतियों को प्रोत्साहित करना, वार्तातय लेन देन प्रणाली (एनडीएस) की स्थापना, एक केन्द्रीकृत निधि प्रबंध प्रणाली का विकास (सीएफएमएस), राष्ट्रीय निपटान प्रणाली (एनएसएस) और अंततः तत्काल सकल निपटान प्रणाली (आरटीजीएस) प्रारंभ करना शामिल है। रिज़र्व बैंक ने तत्काल सकल निपटान प्रणाली का कार्यान्वयन चरणबद्ध रूप से प्रारंभ कर दिया है।

पारदर्शिता

7.28 बैंक अधिकाधिक जटिल संगठन बनते जा रहे हैं। निवेशकों के लिए बैंकों के वित्तीय कार्य-निष्पादन की गुणवत्ता और जोखिम सीमा को समझना कठिन हो रहा है। बैंकों के तुलनपत्रों में निहित पारंपरिक सूचना से अकसर पाठकों को वित्तीय विवरणों की ऐसी जानकारी नहीं मिलतीं जिनसे कि वे आय की गुणवत्ता सुनिश्चित कर सकें। तदनुसार, पर्यवेक्षक बैंक के तुलनपत्र में प्रकटीकरण की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ाने पर विश्वास रखते हैं। पारदर्शिता के कारण बाजार सहभागियों को न केवल सूचना देने, परंतु सूचना को इस ढंग से प्रस्तुत करने, जिससे की निहित जोखिम वास्तविक रूप से परिलक्षित हो सके, की चुनौती का सामना करना पड़ता है। अतः, पारदर्शिता की तलाश निरन्तर जारी रहेगी।

7.29 बैंकिंग संगठनों में पारदर्शिता बढ़ाने के लिए रिज़र्व बैंक क्रमिक नीति अपना रहा है। उदाहरण के लिए मार्च 1998 को समाप्त होनेवाले वर्ष से बैंकों को अपने तुलनपत्र में अन्य बातों में 'लेखों पर टिप्पणियों' के रूप में पूंजी-पर्याप्तता अनुपात, औसतन कार्यशील निधि के प्रतिशत के रूप में आय और ब्याज से इतर आय से संबंधित कई वित्तीय अनुपात तथा साथ ही आस्तियों पर प्रतिलाभ एवं भारत सरकार की शेयरधारिता के प्रतिशत के बारे में सूचना प्रकट करने का निदेश दिया गया था। काफी समय से प्रकटीकरण का दायरा धीरे-धीरे बढ़ रहा है और उनमें अपने-अपने तुलनपत्र के आस्ति और देयता पक्ष में चुनिंदा मदों की परिपक्वता के स्वरूप, गैर-निष्पादक आस्तियों और निवेशों के मूल्यह्रास के लिए धारित तथा संवेदनशील क्षेत्र (जैसे पूंजी बाजार, स्थावर संपदा और पण्य) को उधार देने के लिए किये गये प्रावधानों की घट-बढ़ जैसे क्षेत्र शामिल किये गये हैं। बैंक समूहों के समेकित पर्यवेक्षण करने के लिए पर्यवेक्षकों को शक्ति प्रदान करने पर अधिक ध्यान देने की दृष्टि से 31 मार्च 2003 से समेकित वित्तीय विवरणियां तैयार की जानी हैं जिनमें समेकित तुलनपत्र, लाभ और हानि पर समेकित विवरण, प्रमुख लेखांकन नीतियां तथा खातों पर टिप्पणियां ऐसे सभी समूहों के बारे में देने का आदेश दिया गया है जहां नियंत्रक संस्था कोई बैंक है। समेकित पर्यवेक्षण ढांचे के अंदर एक विवेकसम्मत सूचना प्रणाली स्थापित की गई है जिसमें संबंधित संस्थाओं के खातों पर सूचना दी गई है जिसके अंतर्गत छमाही रिपोर्ट (समेकित विवेकसम्मत रिपोर्ट) रिज़र्व बैंक को प्रस्तुत करना अपेक्षित है। बैंकों द्वारा 31 मार्च 2003 से विभिन्न कारोबारी क्षेत्रों के नतीजों के संबंध में अतिरिक्त प्रकटीकरण किये जायेंगे। प्रकटीकरण के दायरे का क्रमिक विस्तार भारत के प्रकटीकरण मानकों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित मानकों के समकक्ष ला रहा है।

दीर्घावधिक वित्तपोषण

7.30 बुनियादी संरचना, जिसके लिए आम तौर पर दीर्घावधि वित्त अपेक्षित है, के लिए ऋण के प्रवाह को बढ़ावा देने के लिए रिज़र्व बैंक ने कई नीतिगत उपाय किए हैं। उदाहरण के लिए अप्रैल 2003 की मौद्रिक और ऋण नीति में कई विनियामक और विवेकसम्मत छूटें दी गयी हैं : यथा क) विवेकसम्मत एकल उधारकर्ता संस्था को उधार देने की सीमा में छूट, ख) बुनियादी संरचना से संबंधित कतिपय शर्तों को पूरा करने वाले जमानती प्रतिभूतियों में निवेश को रियायती जोखिम भार देना तथा ग) कतिपय रक्षोपायों के अधीन सीधे अर्थक्षम बुनियादी संरचना परियोजनाएं शुरू करने के लिए कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत निजी क्षेत्र के विशेष प्रयोजन (स्पेशल पर्पज व्हीकल) व्यवस्था को ऋण देने की अनुमति देना। इन उपायों का निवल प्रभाव इस तथ्य से परिलक्षित होता है कि बुनियादी संरचना को बकाया सकल बैंक ऋण मार्च 1999 के 5,945 करोड़ रुपए से बढ़कर मार्च 2003 के अंत में 20,000 करोड़ रुपए से अधिक हो गया है।

7.31 जैसा कि अधिकांश अर्थव्यवस्थाओं में देखा गया है, भारत में आवास की मांग प्रबल है जिनमें अब तेजी से औद्योगीकरण और शहरीकरण हो रहा है। इसके अतिरिक्त, अग्र और पश्चवर्ती कई अन्य उद्योग निर्माण कार्य से महत्त्वपूर्ण रूप से संबद्ध हैं। 2002-03 के दौरान आवास वित्त में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है तथा वह भी कम ब्याज दर पर। यह स्वीकार करना होगा कि भारतीय संदर्भ में संभावित गृह-स्वामियों को बैंक ऋण बुनियादी तौर पर दक्षिण एशियाई देशों सहित कई देशों में बैंकों द्वारा संपत्ति के मूल्यों में सट्टेबाजी से भिन्न

है। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि आवास क्षेत्र में चूक की दर औसत से निम्नतर होने के कारण बैंक ऋण के लिए यह अपेक्षाकृत सुरक्षित अवसर प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, भूमि-भवन सहित संवेदनशील क्षेत्र को बैंक ऋण पर समग्र अधिकतम सीमा निश्चित है।

रिज़र्व बैंक की विनियामक भूमिका को पुनः परिभाषित करना

7.32 हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंक के स्तर पर व्यष्टि - विनियमन से समष्टि (व्यापक) संचालन की ओर क्रमशः रुझान देखा गया है। पर्यवेक्षी व्यवस्था में गहन रिपोर्टिंग की आवश्यकताएं सम्मिलित की गई हैं जिनमें प्रौद्योगिकी - प्रेरित कार्य चलेतर विवरणियां, निरीक्षण और लेखा परीक्षा, रेटिंग (वार्षिक कार्यस्थल संबंधी निरीक्षण पर आधारित) और विवेक-सम्मत मानदंडों को सुदृढ़ करने पर ध्यान केंद्रित किया गया है। वार्षिक निरीक्षण रिपोर्टों की समीक्षा वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड द्वारा की जाती है तथा रिपोर्टों से उत्पन्न मुद्दों से संबंधित सिफारिशों पर संबंधित संस्थाओं से चर्चा की जाती है ताकि उन्हें समय-बद्ध तरीके से कार्यान्वित किया जा सके।

कंपनी संचालन

7.33 भारतीय संदर्भ में, विशेषकर स्वामित्व विशाखीकृत होने तथा बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा के कारण कंपनी संचालन का महत्त्व बढ़ गया है। ये मुद्दे अमरीका में लेखांकन अनियमितताओं के मद्देनजर और अधिक महत्त्वपूर्ण हो गए हैं। जब बैंकों को बोर्ड स्तर पर निर्णय लेने तथा नीतियों के निर्माण के लिए विवश किया जाता है तो स्वायत्तता और दक्षता का प्रश्न सामने आ जाता है। तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने कई परामर्शी प्रक्रियाएं शुरू की हैं यथा जैसे कंपनी संचालन पर और बैंकिंग पर्यवेक्षण पर परामर्शी समूहों की रिपोर्टें। इनसे दोनों ही रिपोर्टों में बैंकों में कंपनी संचालन के संव्यवहारों में सुधार लाने हेतु दूरगामी प्रभाव वाले प्रस्ताव हैं। रिज़र्व बैंक ने भी बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं के बोर्डों की पर्यवेक्षी भूमिका की समीक्षा करने और बोर्डों की कार्य प्रणाली बनाम उनके द्वारा किये जानेवाले अनुपालन, उनकी पारदर्शिता, प्रकटीकरण, लेखा परीक्षा समितियाँ के बारे में प्रतिसूचना प्राप्त करने तथा जोखिम और अत्यधिक ऋण जोखिम कम करने की दृष्टि से निदेशक बोर्ड की भूमिका को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए सिफारिश करने हेतु एक परामर्शी समूह गठित किया। इसी परिप्रेक्ष्य में 2002-03 के दौरान अनेक बैंकों की वार्षिक रिपोर्टों में कंपनी संचालन का स्पष्ट उल्लेख करना एक अभिनंदनीय गतिविधि है।

7.34 भारत में सार्वजनिक क्षेत्र की बैंकिंग प्रणाली में सरकारी स्वामित्व की प्रमुखता भारतीय वित्तीय प्रणाली की एक अद्वितीय विशेषता है। बैंकों में जिस हद तक सार्वजनिक स्वामित्व है, उस स्वामित्व में प्रधान तथा एजेंट के जटिल संबंध के रूप में सरकार के अनेक उद्देश्य हो सकते हैं।

सहकारी बैंकिंग में संचालन संबंधी मुद्दे

7.35 सहकारी बैंकों का पर्यवेक्षण एक चुनौती भरा कार्य बना हुआ है। यह केवल इसलिए नहीं कि उनकी संख्या बहुत अधिक है, बल्कि इसलिए भी कि उनके लिए पर्यवेक्षी प्राधिकारी भी अनेक हैं। सहकारी बैंकों का पर्यवेक्षण राज्य सरकार तथा रिज़र्व बैंक (शहरी सहकारी बैंकों के मामले में) और नाबार्ड (सहकारी बैंकों और ज़िला मध्यवर्ती सहकारी बैंकों के मामले में) करते हैं। विभिन्न नियंत्रक संस्थाओं के पर्यवेक्षी प्राधिकरणों को तर्कसम्मत बनाने की तत्काल आवश्यकता है। रिज़र्व बैंक ने बार-बार इस तथ्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि वर्तमान बहुविध विनियामक और पर्यवेक्षी नियंत्रण प्रणाली सहकारी बैंकों की अपने जमाकर्ताओं के हित में दक्ष कार्य प्रणाली को सीमित करती हैं। सरकार ने बैंककारी विनियमन (संशोधन) और विविध प्रावधान विधेयक, 2003 संसद के समक्ष रखा है जिसे वित्त संबंधी स्थायी समिति को विचारार्थ भेज दिया गया है। इस बीच, रिज़र्व बैंक ने बेहतर कंपनी संचालन, स्वस्थ निवेश नीति, उचित आंतरिक नियंत्रण प्रणाली, बेहतर ऋण जोखिम प्रबंधन, नये उभरते कारोबार यथा व्यष्टि-वित्त, बेहतर ग्राहक सेवा के प्रति प्रतिबद्धता, पर्याप्त मशीनीकरण पर ध्यान केन्द्रित करने और शहरी सहकारी बैंकों के कार्य-निष्पादन में सुधार लाने के लिए आंतरिक व्यवस्था पर सक्रिय एवं व्यावहारिक नीतियां लागू करने जैसे कई उपाय किये हैं।

निष्कर्षात्मक टिप्पणियां

7.36 बैंकों के बीच बढ़ती प्रतिस्पर्धा केवल पहले से सुस्थापित बैंकों से ही नहीं है, बल्कि नये स्थापित बैंकों तथा अन्य मध्यस्थ संस्थाओं से भी है, जो बैंकों के लागत कीमत अंतर (स्प्रेड) पर दबाव डालती रही है। उन्नत प्रौद्योगिकी से युक्त नये निजी बैंक और विदेशी बैंक एक ही स्थान पर सेवा ('वन स्टाप शॉप') वित्तीय सेवाओं के रूप में स्थापित हो रहे हैं और ग्राहकों को अधिक सुविधाजनक उच्च श्रेणी की सेवा प्रदान कर रहे हैं जो प्रौद्योगिकी में तथा अन्य बुनियादी संरचना सेवाओं में उचित निवेश से समर्थित हैं। अतः सरकारी क्षेत्र के बैंकों की भावी लाभप्रदता अधिकाधिक गैर-ब्याजी आय निर्मित करने और परिचालन व्यय को नियंत्रित करने की उनकी क्षमता पर निर्भर होगी। बड़ी-बड़ी कम्पनियों / ग्राहकों को देशी तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजारों से सीधे ही न्यून लागत की निधियां प्राप्त करने का विकल्प प्राप्त होता रहा है। सुधारों से समर्थित नया वातावरण जमाकर्ताओं और ऋणकर्ताओं को अपने कारोबार करने के लिए अनेक प्रकार के अवसर प्रदान कर रहा है। पूंजी - पर्याप्तता संबंधी मानक लागू होने के अलावा,

जो कि अमल में लाया जा रहा है, बाजार जोखिम का मापन करने की नयी पद्धतियों यथा जोखिम पर-मूल्य और बाध्यता-पूर्व दृष्टिकोण से बैंकिंग क्षेत्र के लिए अधिक मानकीकृत परंतु सख्त ढांचा उपलब्ध होने की आशा है। साथ ही, बैंकिंग उद्योग में प्रौद्योगिकी में होनेवाली प्रगति से परिवर्तन हो रहे हैं। चूंकि खुदरा ग्राहक भी तेजी से अधिक मांग करने वाले बनते जा रहे हैं : प्रतिस्पर्धी वातावरण में बैंकों को मूल्य योजित - सेवाएं देनी पड़ेंगी। उच्च प्रतिस्पर्धा वाली बैंकिंग लाने के लिए प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देना और गैर-निधि आधारित गतिविधियों को वैविध्यपूर्ण बनाते हुए अधिकाधिक ब्याजेतर आय निर्मित करना भावी भारतीय बैंकिंग की महत्वपूर्ण विशेषता होगी।